Knowledgeable Research Vol. 1, No. 11, June 2023. ISSN 2583-6633

Knowledgeable Research Vol-1, No-11, *June 2023*
An International Open-access Peer-reviewed Journal **Web:** http://www.knowledgeableresearch.com/

भारतीय धर्मशास्त्र में स्मृतियों की शिक्षा

डॉ0 अन्जू गंगवार

सी0एम0जे0विश्वविद्यालय

शिलांग मेधालय

ईमेल : di.kishan1792@gmail.com

****

शोध संदर्भ

स्मृति ग्रन्थों में एक ओर जहाँ धार्मिकए सामजिक और व्यक्तिगत आचरण तथा राजधर्म का उपदेश हैए वहीं दूसरी ओर शिक्षा के सम्बन्ध में निर्देश हैं। मनुस्मृति का आरम्भ शिक्षा के प्रकरण से हुआ है। प्रथम अध्याय में ऋषिगण मनु के समीप वर्णधर्म की शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते हैं। दूसरे अध्याय में मनु ने शिक्षा सम्बन्धि उपदेश दिये हैं। बालक के उपनयन वर्णों के उपनयनए विद्याध्याय के योग्य आयु मेखलाए यज्ञोपवीतए दंडए अजिनए ब्रह्नाचारी के कर्तव्य तथा आचरण आदि विषयों का मनुस्मृति में विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है।

Keywords: शिक्षा, स्मृति ग्रन्थों ,मनुस्मृति, धर्मशास्त्र

****

भारतीय धर्मशास्त्र में स्मृति ग्रन्थों को आधारभूत स्वीकार किया गया है। आचार –व्यवहार और धर्म– सम्बन्धी किसी प्रकार के निर्णय के लिये वेदों के पश्चात् स्मृतियों को प्रमाण रूप में स्वीकार किया गया था। सूत्र साहित्य में किसी भी विषय को अल्प रूप में कहा गया था। जबकि स्मृतियों को धर्मशास्त्र कहा है।

स्मृति ग्रन्थों में एक ओर जहाँ धार्मिक, सामजिक और व्यक्तिगत आचरण तथा राजधर्म का उपदेश है, वहीं दूसरी ओर शिक्षा के सम्बन्ध में निर्देश हैं। मनुस्मृति का आरम्भ शिक्षा के प्रकरण से हुआ है। प्रथम अध्याय में ऋषिगण मनु के समीप वर्णधर्म की शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते हैं। दूसरे अध्याय में मनु ने शिक्षा सम्बन्धि उपदेश दिये हैं। बालक के उपनयन वर्णों के उपनयन, विद्याध्याय के योग्य आयु मेखला, यज्ञोपवीत, दंड, अजिन, ब्रह्मचारी के कर्तव्य तथा आचरण आदि विषयों का मनुस्मृति में विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है।

Knowledgeable Research Vol. 1, No. 11, June 2023. ISSN 2583-6633

स्मृतिग्रन्थों में '' मनुस्तृति'' को अति प्राचीन और महान् माना जाता है। समस्त विषयों का अध्ययन कराने के लिये साधारणतया मनुस्मृति को ही प्रमाण समझा जाता रहा है। यह ग्रन्थ 12 अध्यायों में विभाजित है। '' मनुस्मुति'' के पश्चात् दूसरे स्मृति में ब्रह्मचारी के अध्ययन और कर्तव्यों का विस्तृत विवेचन है। स्मृति ग्रन्थों में '' नारदस्मृति'' '' पाराशरस्मृति'' '' बृहस्पतिस्मृति'' ''हरीतस्मृति''गौतम स्मृति'' यमस्मृति'' आदि प्रसिद्ध हैं। विभिन्न स्मृतियों के लघु बृहत् और बृहदत् संस्करा भी प्राप्त हैं। लगभग 120 स्मृतियों के सन्दर्भ मिलते हैं। कथ का कथन है कि स्मृतियों की संख्या 152 तक कही जाती है। 79 स्मृतियों से हमें निम्न शिक्षायें प्राप्त होती है जो इस प्रकार हैं–

(1) धर्म की शिक्षा – मनुस्मृति में महर्षि मनु धर्म का लक्षण करते हुए लिखते हैं–

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्थय च प्रियामत्मनः।

एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्भस्य लक्षणम्।।1

अर्थात् वेद स्मृति, सदाचार और अपनी आत्मा का प्रिय व्यवहार यह चतुर्विधधर्म का साक्षात् लक्षम है।

धर्म ही मनुष्य का सार है। उसका ठीक से पालन करने कल्याण होना सम्भव होता है। धर्म का उपदेश करते हुए यह कहा गया है कि – '' वहाँ परलोक में सहायता करने के लिये पिता माता, पुत्र स्त्री अथवा जाति वाले कोई भी नहीं रहते। वहाँ तो इस लोक में किया हुआ केवल एक धर्म ही सहायक हुआ करता है। जीव अकेले ही उत्पन्न होता है और अकेला ही मृत्यु को प्राप्त होता है और अकेला ही सुकृत एवं दुष्कर्म के भोगता है। मृत प्राणी के रूाव को बन्धु–बांधव आदि काष्ठ और पत्थर की तरह भूमि पर छोड़कर के विमुख हो जाते हैं। फिर वह प्राणी ही परलोक को जाता है। यदि उसका कोई भी साथी होता है तो वह एकमात्र धर्म ही होंता है।81

(2) गृहसथाश्रम की शिक्षा – प्रायः सभी स्मृतिकारों ने गृहसथाश्रम की प्रशंसा की है, क्योंकि स्मृति धर्म का पालन विशिष्ट रूप से गृहस्थों के लिए साघ्य हैं। '' दक्ष ने पत्नी को गृहस्थी का मूलआधार स्वीकार किया गया है। उनके विचार का विशाद उल्लेख किया है जो प्रत्येक सद्गृहस्थ के लिये विचारणीय है–

Knowledgeable Research Vol. 1, No. 11, June 2023. ISSN 2583-6633

पत्नीमूलं पुसां यदि च्छदोडनुवतिर्नी।

गृहस्थाश्रमेसमं नास्ति यदि भार्या वशानुमगा।।2

तया धर्मार्थकामानां त्रिवर्गफलमश्नुते।।

प्राकाम्ये वर्त्तमाना तु स्नेहान्नतु निवारिता।।3

अवश्या स भवेत् पश्चात् यथ व्याधिरूपेक्षितः

अनुकूला नवाग्दुटा दक्षा साध्वी प्रियम्वदा।।4

आत्मागुप्ता स्वामिभक्ता देवता सा न मानुषि।।5

पुरूषों के घर का मूल आधार पत्नी ही होती है, यदि वह अपने स्वभाव के अनुकूल व्यवहार वाली हो, यदि भार्या अपने वशवर्तिनी हो तो गृहस्थाश्रम के समान आनन्दायक अन्य कुछ नहीं है।

स्नेह का भाव रखने वाली भार्या हो तो उसके द्वारा धर्म, अर्थ और काम का

त्रिवर्गफल सहज ही प्राप्त होता है।

जिस प्रकार व्याधि उपेक्षा कर देने पर वह असाध्य हो जाती है, उसी प्रकार उपेक्षा का व्यवहार करने से स्त्री भी वश के बाहर हो जाती है। जो पति के सदा अनुकूल हो, वाणी से दुष्ट न हो, दक्ष हो, साध्वी हो, प्रिय भाषिणी हो, आत्मगुप्ता और स्वामी की भक्त हो, ऐसी भार्या मानुषी नहीं देवी स्वरूप ही है। जिसकी पत्नी पति के अनुकूल है उसके लिये यह स्वर्ग है और जिसकी सदा प्रतिकूल है। उसका यह संसार ही नरक रूप है। स्वर्ग में भी परस्पर प्रेमानुराग दुर्लभ होता है, यदि वह विनम्र चित्त की बात जानने वाली और वश में रहने वाली हो।

पत्नी के इस महत्व को वर्णित करके स्मृतियों ने उन लोगों को, जो स्त्री को एकमात्र विलास की सामग्री मानते हैं और नई–नई कलियों का रस लेने के लिये अपनी पत्नी को पीड़ित करते हैं, उन्हें चेतावनी दी गई है कि इस प्रकार का आचरण अत्यन्त पापयुक्त है।

Knowledgeable Research Vol. 1, No. 11, June 2023. ISSN 2583-6633

अदृटापतितां भार्या यौवने यः परित्यजेत्।

स जीवनान्ते स्त्रीव्त्वञच समाप्नुयात्।। 6

जो अपनी स्त्री को इस प्रकार उपेक्षित करता है, उसकी उपेक्षा है वह दूसरे जन्म में स्त्री बनकर बन्ध्यत्व को प्राप्त होता है।

(3) राजधर्म की शिक्षा– गौतम स्मृति में राजधर्म की शिक्षाओं का अपना विशेष महत्व है– राजा को सबके अभप्सित में ब्राह्मण को वर्जित कर साधुकारी होना चाहिए तथा सहायता करने वाला, उपायों से युक्त एवं और प्रजा के प्रति समान भाव रखने वचाला होना चाहिए। ब्राह्मणों को भी राजा का समान करना चाहिए, राजा का कर्तव्य है ि कवह न्याय पूर्वक समस्त वर्णो धर्मों की रक्षा समस्त आश्रम धर्मों की रक्षा करें। इन्हें इपने अपने धर्मों के पूर्णतया प्रगतिपालन करने में स्थपित करें।

धर्म में स्थित राजा धर्म के अंश का भी भागी होता है। ऐसा जाना जाता है। विद्या अभिजन, वाणी, रूप, वय और शील से उत्पन्न तथ न्याय वृत्ति वाला एवं तपस्वी ब्राह्मण को पुरोहित बनावे। उसके द्वारा कथित होता हुआ समस्त कर्म करना चाहिए। ब्राह्मण के आदेश से चलने वाला क्षत्रिय समृद्ध होता है और कभीकष्ट नहीं प्राप्त करता है, ऐसा शस्त्र वचन से जाना जाता है। दैवोत्पात चिन्तक जो भी कहें उनका आदर राजा को करना चाहिए। 7

वेदोधर्मशास्त्रणयड्गान्युपवेदाः पुराणां देशजातिकुलधर्माः।

शुचाम्यानायैरविरूद्धाः प्रमाणः कृषिवणिक्याशु पाल्यकुसीदकारवः।।

स्वे स्वे वर्गे तेभ्यो यथाधिकारमर्थन् प्रत्यवह्त्य धर्मव्यवस्था।।8

अर्थात् राजा के लिये वेद–धर्म–शास्त्र –वेत्ता और उपदेव– पुराण, देश– धर्म –जाति–धर्म और कुलधर्म जो कि आम्नायों के अविरूद्ध हों प्रणाम स्वरूप होते हैं। कृषि, वाणिज्य, पशुपालन, कुसीद और शिल्प को अपने–अपने वर्ग के अधिकारानुरूप विभाजन पूर्णतया धर्म की व्यवस्था करना राजा का धर्म होता है।

Knowledgeable Research Vol. 1, No. 11, June 2023. ISSN 2583-6633

राजा के प्रजा का पालन करने वाला और वर्णों तथा आश्रमों में लेागों के द्वारा अपनें–अपनें धर्मों में लगना चाहिए। राजा को जंगल वाला, पशुओं के हित की रक्षा निवास करते हों, उसे अन्वित देश में अपना आश्रय बनाना चाहिए। जिसमें वैश्य, शूद्र निवास करते हों, उसे धनुषधारी मनुष्य भूमि, वृक्ष पर्वत युक्त दुर्गों में से किसी एक दुर्ग को आश्रय लेना चाहिए। उसमें ग्रामाध्यक्ष बनावें। 9

इसके अतिरिक्त राजधर्म की एक महत्वपूर्ण यह है कि सर्वदा ब्राह्मण की सेवा एवं पूजा करनी चहिए। जैसे कि कहा गया है कि ''राजा'' को समस्त कार्यों में समवत्सर के अधीन होना चाहिए। देवता और ब्राह्मणों की सदा पूजा करनी चाहिए। वृद्धों की सेवा करने वाला और यज्ञों का यजन करने वाला होना चाहिए। देश में कोई भी ब्राह्मण भूख से दुःखित नहीं होवे। ब्राह्मणों को भूमि देवे जो सत्कर्म में निरत होवें और भूमि का दान करें। उनके वश में होने के लिये पश्चात् प्रणाम देवें जिसमें दान के उच्छेद न करने का उल्लेख हो। पट या ताम्र पत्र में लिखकर अपनी मोहर लगाकर ओगे होने वाले राजाओं को जताने के लिए दे देना चाहिए। दूसरों की दी हुई भूमि का अपरहण नहीं करे। ब्राह्मण को सर्वदाय दे देवे।90

आचार की शिक्षा– स्मृतियों से हमें आचार की महत्वपूर्ण शिक्षायें प्राप्त होती हैं–

आचारः परमो धर्मः सर्वेषामिति निश्चयः

हीनाचारपरीतात्मा प्रेत्य चेह विनश्यति।। 10

अर्थात आचार सभी का परम धर्म होता है, यह निश्चित् है। जो हीनाचार वाला होता है , वह संसार में तथा मरकर परलोक में भी नष्ट हो जाता है।

नैनं तपांसिं न ब्रह्म नाग्निहोत्रं न दक्षिणः।

हीनायापरमितो भ्रष्टं तारयन्ति कथंचन।।11

अर्थात् हीन आचार वले पुरूष को तप, वेद, अग्निहोत्र और दक्षिणा किसी प्रकार से भी नहीं तार सकते हैं क्योंकि आचार हीनता से वह बहुत भ्रष्ट हो जाता है।

आचारहीनं न पुनन्ति वेदा यद्यप्यधीतः सहषड्मिरङगैः।

Knowledgeable Research Vol. 1, No. 11, June 2023. ISSN 2583-6633

छन्दांस्येनं मृत्युकाले त्यजन्ति नीडं शकुन्ता इव जातपक्षाः12

आचारहीनस्य तु ब्राह्मणस्व वेदाः षडगास्त्वखिलाः सयज्ञा।

कां प्रीतिमुत्पादयितु समर्था अन्धस्थ द्वारा दर्शनीय।।13

जो पुरूष अपने आचार से हीन हो जाता है, उसको वेद भी पुनीत नहीं करते हैं। चाहे वह छहों अंगों के साथ भली भाँति पढ़े गये हों। मौत के समय आने पर ये इस आचार हीन को पंख उत्पन्न होने वाले पक्षियों के भाँति त्याग देते हैं।

जो ब्राह्मण अपने आचार से शून्य या हीन होता है, उसे यज्ञों के तथा षट् अगों से उनके सहित वेद कोई भी प्रीमि प्रदान करने में समर्थ नहीं।

दुराचारी हि पुरूषो लोके भवति निन्दितः।

दुःखभागी च सततं व्याधितोडल्पायुरेव च।। 14

दुष्ट आचार वाला मनुष्य संसार मं निन्दा से युक्त होता है। अत्यन्त दुःख को भोगने वाला सर्वथा व्याधियों से ग्रस्त और अल्प आयु वाला हो जाता है।

आचारल्लभते धर्ममाचाराल्लभते धनम्।

आचारात्कीर्तिमाप्नोति आचारो हन्तयलक्षणम्।। 15

आचार से ही धर्म फल वाला होता है और आचार से ध नही सफल होता है। आचार यदि दुष्ट स्वरूप वाला हो तो लक्ष्मणहीन पुरूषों को नष्ट भी कर देता है।

सर्वलक्षणहीनोडपि यः सदाचारवान्नरः। श्रद्दधानोडनसूयश्च शतं वर्षाणि जीवित।। 16

समस्त लक्षणों से शून्य भी पुरूष यदि सदाचार वाला होता है। वह श्रद्धा के योग्य तथा निन्दा से रहित होता है और वर्ष तक जीवित रहता है।

<u>संदर्भ सूची</u>

Knowledgeable Research Vol. 1, No. 11, June 2023. ISSN 2583-6633

1. शिष्याशिष्टारवधेन अशवतौ रज्जुवेणुविदलाभ्याम् अन्येन धेन राजा ग्राह्ऱः। गौतम धर्मसूत्र – 2/49/51
2. विद्यया सह मर्त्तव्य न वैनामूष वर्षत्।। बोधायन धर्मसूत्र – 122/48
3. श्रुतिस्तु वेदों विज्ञेयो धर्मशास्त्र तु वै स्मृति।। मनुस्मृति – 2/10
4. कीथ0 ए0 बी0 ए हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर (1948)
5. मनुस्मृति
6. मनुस्मृति
7. दक्षस्मृति – श्लोक सं01 1 पृ0 सं0 204
8. दक्षस्मृति – श्लोक सं0 2 पृ0 सं0 204
9. दक्षस्मृति – श्लोक सं0 3 पृ0 सं0 205
10. दक्षस्मृति – श्लोक सं0 4 पृ0 सं0 205
11. दक्षस्मृति – श्लोक सं0 171 पृ0 सं0 207
12. गौतमस्मृति – पृ0 सं0 169
13. गौतमस्मृति – पृ0 सं0 200
14. विष्णुस्मृति – पृ0 सं0 471
15. विष्णुस्मृति – पृ0 सं0 472
16. वसिष्ठ स्मृति – श्लोक संख्या 166 पृ0 सं0 264